सिर्फ शिक्षक हड़ताल पर थे !

सिर्फ शिक्षक हड़ताल पर थे, पूरे राजस्थान में । शिक्षकों के सभी संगठन इस हड़ताल का संचालन कर रहे थे । प्रदेश के लगभग सभी शिक्षक-शिक्षिकायें हड़ताल में शामिल थे । यह राजस्थान के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा आयोजित होने वाली व्यापक परीक्षाओं की पूर्व-बेला थी । शिक्षकों ने राज्य सरकार को धमकी दी थी कि यदि उनकी मांगे नहीं मानी गईं तो वे परीक्षाओं का बहिष्कार करेंगे। शिक्षक-वर्ग का पुराना अनुभव था, राज्य-सरकार ऐसे नाजुक समय में उनके समक्ष घुटने टेक देती थी । लेकिन इस बार ऐसा नहीं हुआ । शिक्षा-विभाग ने एक बार परीक्षाएं आगे खिसकाने की घोषणा की, जैसे कोई हिंसक जीव शिकार पर हमले के पहले अपने सारे वजूद को कसने के लिए शरीर को ढीला छोड़ता है । फिर कलक्टरों को आदेश दिया कि निर्धारित तिथियों में परीक्षा संपन्न करायें। कलक्टरों को हर समस्या से जूझना आता है । नियत तिथि को बच्चे परीक्षाएं देने गये । पर्चे आऊट होने जैसी चंद घटनाओं को छोड़कर परीक्षाएं सम्पन्न हो गईं । ऐसी घटनाऐं तो तब भी होती थीं, जब शिक्षक परीक्षाएं लेते थे । कलक्टर द्वारा नियुक्त कर्मचारी परीक्षाएं लेते रहे, छात्र-छात्राएं परीक्षाएं देते रहे, मां-बाप उन्हें परीक्षा केन्द्रों तक लाते-छोड़ते रहे तथा अन्य मदद देते रहे । राज्य-सरकार शिक्षकों से बातचीत को टालती रही । शिक्षक हड़ताल पर डटे रहे ।

अन्ततः शिक्षक संगठनों का राज्य-सरकार से समझौता हो गया । हड़ताल समाप्ति की घोषणा करके शिक्षक स्कूल में लौट आये । तब तक अधिकांश बच्चों के सिर से परीक्षाओं का तूफान गुजर चुका था । उधर समझौते के बावजूद शिक्षकों के चेहरे लटके हुए थे । पता नहीं चला कि इस जुझारू संघर्ष में कौन जीता कौन हारा । समझौते की समझ कुछ-कुछ ऐसी लगती थी ''तुम्हारी भी जय-जय, हमारी भी जय-जय, न हम जीते न तुम हारे !''

राज्य-प्रशासन और शिक्षक-वर्ग के मध्य यह जो दो-तरफा हार या जीत घटित हुई है, क्या उस पर विचार नहीं करना चाहिये ? इस प्रसंग के निहितार्थ औपचारिक शिक्षा-तंत्र की अवस्थिति को बताते हैं । शिक्षक-वर्ग से राज्य-प्रशासन का व्यवहार ठीक वैसा ही रहा है जैसा किसी दूसरे कर्मचारी संगठन अथवा ट्रेड-यूनियन से रहता है । दूसरी ओर शिक्षक-संगठन की भूमिका और कार्यवाही भी किसी और ट्रेड-यूनियन से भिन्न नहीं है । इस पर सबसे पहले यही कहा जा सकता है कि शिक्षक भी समाज और व्यवस्था का सामान्य अंग हैं । अपने हितों की आवाज संगठित रूप से उठाने का उन्हें भी अधिकार है और ऐसे संगठनों के अपने तौर-तरीके होते हैं । यदि ऐसा है तो राज्य-प्रशासन भी शिक्षक-वर्ग के संगठन से किसी कर्मचारी-संगठन की तरह व्यवहार करता है अथवा ऐसे बर्ताव करता है जैसे कोई प्रबंधक अपने ट्रेड-यूनियन से तो क्या कहा जा सकता है : वस्तुतः ऐसा ही है भी । शिक्षक-संगठनों की अनसुनी की गई तो उन्होंने हड़ताल के लिए परीक्षा के नाजुक मौके को चुनना शुरु किया । प्रशासन ने अपनी इस कमजोरी की काट तैयार कर ली ।

इस प्रसंग में सवाल उठता है कि क्या शिक्षक भी और दूसरे कर्मचारियों की तरह का ही सामान्य कर्मचारी है अथवा उसके व्यवसाय की कुछ विशिष्टताएं है ? क्या शिक्षक जो कार्य करता है, उसकी संस्कृति और प्रकृति भिन्न नहीं है ? क्या इस कार्य की भिन्न प्रकृति शिक्षक-वर्ग का विशिष्ट सामाजिक व नैतिक चरित्र नहीं बनाती ? तब क्या शिक्षकों के संगठन की अपनी कोई विशेषता नहीं होगी ? क्या वे कुछ भिन्न मांगे रखेंगे या महज अर्थवाद के दलदल में ही फंसे रहेंगे ? यहां हमारा

मकसद यह नहीं है कि शिक्षकों को अपने वेतन-सुविधा जैसे मुद्दे नहीं उठाने चाहियें अथवा हाल की हड़ताल में उठायी उनकी मांगे न्यायोचित नहीं थीं ।

राज्य-प्रशासन को दूध का धुला तब ही कहा जा सकता है, जबकि हम ऐतिहासिक विश्लेषण के बाद यह देख सकते हों कि उसने प्रदेश के शिक्षा-तंत्र के जनतांत्रिकरण और उसकी अकादमिक समृद्धि को सदैव प्रोत्साहित किया है । यदि उसने इन चीजों को हतोत्साहित किया है तो प्रकारान्तर से उसने समाज के एक प्रबुद्ध और संवेदनशील तबके को ह्रास की ओर धकेला है । और हमारी जहां तक जानकारी है, दुर्भाग्य से राज्य-प्रशासन की भूमिका नकारात्मक ही ज्यादा रही है ।

इन बातों को गुजरे जमाना नहीं हुआ, जब कॉलेजों और स्कूल की छात्र-हड़तालों से लोग परेशान रहते थे। बाद में ये हड़तालें कम होती गयीं और प्रश्न पत्रों के बहिष्कार भी खास मकसद से होने लगे । इस बात का जिक्र हम खास तौर से कर रहे हैं । हमने सबसे पहले कहा ''सिर्फ शिक्षक हड़ताल पर थे ।'' हम सवाल उठाना चाहते हैं कि जब शिक्षकों की मांगे न्यायोचित थीं और प्रशासन उनकी मांग पर ध्यान नहीं दे रहा था; ऊपर से परीक्षाकाल था तो बच्चों ने अपने शिक्षकों के पक्ष में हड़ताल क्यों नहीं की ? हमने जिक्र किया कि पूर्व में बच्चे हड़ताल करते रहे हैं और हड़ताल करना उन्हें आता है। बच्चों ने परीक्षाओं का भी बहिष्कार नहीं किया । वे कह सकते थे कि जब तक खुद हमारे शिक्षक परीक्षा लेने नहीं आते, हम परीक्षा नहीं देंगे । कल्पना कीजिये प्रदेश के लाखों बच्चे विरोध की ये आवाज उठाते । लेकिन कहीं से ऐसी कोई आवाज नहीं आई । सभी बच्चों ने बदली स्थिति से समायोजन किया और परीक्षा दी ।

बच्चों के मां-बाप ने भी शिक्षकों का पक्ष-पोषण नहीं किया । किसी अखबार के संपादक को शिक्षकों की हड़ताल के समर्थन में एक भी अभिभावक ने चिट्ठी नहीं लिखी । सिर्फ यह शिकायतें आती रहीं कि बच्चों के भविष्य के साथ खिलवाड़ हो रहा है । सब जानते हैं कि बोर्ड की परीक्षा बच्चे के भविष्य का निर्धारण करती रही हैं । इसलिए इस परीक्षा से बच्चे से ज्यादा उसका अभिभावक डरता है । लोगों की शिकायत यह थी कि प्रशासन और शिक्षकों की लड़ाई में बच्चे बिना बात पिस रहे हैं । लोग निष्क्रिय दृष्टा थे अथवा बेवस भोक्ता ।

शिक्षकों का संबंध बच्चे और समुदाय दोनों से टूट चुका था । परीक्षा की जिस नाजुक घड़ी का इस्तेमाल शिक्षक-वर्ग पूर्व में प्रशासन को झुकाने में कर चुका था और इस बार फिर इसी इरादे को दोहराना चाहता था, उसने उलट प्रभाव दिखाया । शिक्षक-वर्ग समाज की सहानुभूति खो चुका था। समाज की नजर में शिक्षक भी उस व्यक्ति में बदल चुका था जिसके लिए अपने निजी हित सर्वोपरि थे और इन हितों की पैरवी को लेकर उसे समाज पर कोई भरोसा नहीं था । हालांकि समाज जैसा है वैसा है लेकिन शिक्षक का इस पर भरोसा खो देना नजरअंदाज करने की बात नहीं है ।

बहरहाल, प्रशासन को मालूम था कि शिक्षक अकेला पड़ गया है । इसलिए उसने यह निर्णय लिया कि वह उसके बिना भी परीक्षा करवा सकता है । यह परीक्षा तो वह पहले भी करा सकता था । कलक्टर और उसकी मशीनरी पहले भी थी । कुछ और चीज थी, जो इस बीच शिक्षक के आस-पास घटित हो चुकी थी । साथ ही एक नई अभिलक्षणा फूट रही थी । कहीं-कहीं शिक्षकों के समूह ने किसी शिक्षक के और शिक्षिकाओं के समूह ने किसी शिक्षिका के मुंह काले किये । इसलिये कि ये लोग हड़ताल पर न रह कर स्कूल जा रहे थे । ये कितने अकेलेपन और असुरक्षा की भावना वाले लोग रहे होंगे - जो अब चीजों पर और अधिक भरोसा नहीं कर सकते थे । और अपनी बिरादरी के इन साथियों की मन:स्थिति को न समझ कर कलंकित करते हुए शिक्षक-वर्ग ने क्या इंगित किया है ? ◆